खानपान की बदलती तसवीर 14

पिछले दस-पंद्रह वर्षों में हमारी खानपान की संस्कृति में एक बड़ा बदलाव आया है। इडली-डोसा-बड़ा-साँभर-रसम अब केवल दक्षिण भारत तक सीमित नहीं हैं। ये उत्तर भारत के भी हर शहर में उपलब्ध हैं और अब तो उत्तर भारत की 'ढाबा' संस्कृति लगभग पूरे देश में फैल चुकी है। अब आप कहीं भी हों, उत्तर भारतीय रोटी-दाल-साग आपको मिल ही जाएँगे। 'फ़ास्ट फ़ूड' (तुरंत भोजन) का चलन भी बड़े शहरों में खूब बढ़ा है। इस 'फ़ास्ट फ़ूड' में बर्गर, नूडल्स जैसी कई चीज़ें शामिल हैं। एक ज़माने में कुछ ही लोगों तक सीमित 'चाइनीज़ नूडल्स' अब संभवतः किसी के लिए अजनबी नहीं रहे।

'टू मिनट्स नूडल्स' के पैकेटबंद रूप से तो कम-से-कम बच्चे-बूढ़े सभी परिचित हो चुके हैं। इसी तरह नमकीन के कई स्थानीय प्रकार अभी तक भले मौजूद हों, लेकिन आलू-चिप्स के कई विज्ञापित रूप तेज़ी से घर-घर में अपनी जगह बनाते जा रहे हैं।

गुजराती ढोकला-गाठिया भी अब देश के कई हिस्सों में स्वाद लेकर खाए जाते हैं और बंगाली मिठाइयों की केवल रसभरी चर्चा ही नहीं होती, वे कई शहरों में पहले की तुलना में अधिक उपलब्ध हैं। यानी स्थानीय व्यंजनों के साथ ही अब अन्य प्रदेशों के व्यंजन-पकवान भी प्रायः हर क्षेत्र में मिलते हैं और मध्यमवर्गीय जीवन में भोजन-विविधता अपनी जगह बना चुकी है।

कुछ चीज़ें और भी हुई हैं। मसलन अंग्रेज़ी राज तक जो ब्रेड केवल साहबी ठिकानों तक सीमित थी, वह कस्बों तक पहुँच चुकी है और नाश्ते के रूप में लाखों-करोड़ों भारतीय घरों में सेंकी-तली जा रही है। खानपान की इस बदली हुई संस्कृति से सबसे अधिक प्रभावित नयी पीढ़ी हुई है, जो पहले के स्थानीय व्यंजनों के बारे में बहुत कम जानती है, पर कई नए व्यंजनों के बारे में बहुत-कुछ जानती है। स्थानीय व्यंजन भी तो अब घटकर कुछ ही चीज़ों तक सीमित रह गए हैं। बंबई की पाव-भाजी और दिल्ली के छोले-कुलचों की दुनिया पहले की तुलना में बड़ी ज़रूर है, पर अन्य स्थानीय व्यंजनों की दुनिया में छोटी हुई है। जानकार ये भी बताते हैं कि मथुरा के पेड़ों और आगरा के पेठे-नमकीन में अब वह बात कहाँ रही! यानी जो चीज़ें बची भी हुई हैं, उनकी गुणवत्ता में फ़र्क पड़ा है। फिर मौसम और ऋतुओं के अनुसार फलों-खाद्यान्नों से जो व्यंजन और पकवान बना करते थे, उन्हें बनाने की फुरसत भी अब कितने लोगों को रह गई है। अब गृहिणियों या कामकाजी महिलाओं के लिए खरबूज़े के बीज सुखाना-छीलना और फिर उनसे व्यंजन तैयार करना सचमुच दु:साध्य है।

यानी हम पाते हैं कि एक ओर तो स्थानीय व्यंजनों में कमी आई है, दूसरी ओर वे ही देसी-विदेशी व्यंजन अपनाए जा रहे हैं, जिन्हें बनाने-पकाने में सुविधा हो। जटिल प्रक्रियाओं वाली चीज़ें तो कभी-कभार व्यंजन-पुस्तिकाओं के आधार पर तैयार की जाती हैं। अब शहरी जीवन में जो भागमभाग है, उसे देखते हुए यह स्थिति स्वाभाविक लगती है। फिर कमरतोड़ महँगाई ने भी लोगों को कई चीज़ों से धीरे-धीरे वंचित किया है। जिन व्यंजनों में बिना मेवों के स्वाद नहीं आता, उन्हें बनाने-पकाने के बारे में भला कौन चार बार नहीं सोचेगा!

खानपान की जो एक मिश्रित संस्कृति बनी है, इसके अपने सकारात्मक पक्ष भी हैं। गृहिणियों और कामकाजी महिलाओं को अब जल्दी तैयार हो जानेवाले विविध व्यंजनों की विधियाँ उपलब्ध हैं। नयी पीढ़ी को देश-विदेश के व्यंजनों को जानने का सुयोग मिला है—भले ही किन्हीं कारणों से और किन्हीं खास रूपों में (क्योंकि यह भी एक सच्चाई है कि ये विविध व्यंजन इन्हें निखालिस रूप में उपलब्ध नहीं हैं)।

आज़ादी के बाद उद्योग-धंधों, नौकरियों-तबादलों का जो एक नया विस्तार हुआ है, उसके कारण भी खानपान की चीज़ें किसी एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में पहुँची हैं। बड़े शहरों के मध्यमवर्गीय स्कूलों में जब दोपहर के 'टिफ़िन' के वक्त बच्चों के टिफ़िन-डिब्बे खुलते हैं तो उनसे विभिन्न प्रदेशों के व्यंजनों की एक खुशबू उठती है।

हम खानपान से भी एक-दूसरे को जानते हैं। इस दृष्टि से देखें तो खानपान की नयी संस्कृति में हमें राष्ट्रीय एकता के लिए नए बीज भी मिल सकते हैं। बीज भलीभाँति तभी अंकुरित होंगे जब हम खानपान से जुड़ी हुई दूसरी चीज़ों की ओर भी ध्यान देंगे। मसलन हम उस बोली-बानी, भाषा-भूषा आदि को भी किसी-न-किसी रूप में ज़्यादा जानेंगे, जो किसी खानपान-विशेष से जुड़ी हुई है।

इसी के साथ ध्यान देने की बात यह है कि 'स्थानीय' व्यंजनों का पुनरुद्धार भी ज़रूरी है जिन्हें अब 'एथनिक' कहकर पुकारने का चलन बढ़ा है। ऐसे स्थानीय व्यंजन केवल पाँच सितारा होटलों के प्रचारार्थ नहीं छोड़ दिए जाने चाहिए। पाँच सितारा होटलों में वे कभी-कभार मिलते रहें, पर घरों-बाज़ारों से गायब हो जाएँ तो यह एक दुर्भाग्य ही होगा। अच्छी तरह बनाई-पकाई गई पूड़ियाँ-कचौड़ियाँ-जलेबियाँ भी अब बाज़ारों से गायब हो रही हैं। मौसमी सब्ज़ियों से भरे हुए समोसे भी अब कहाँ मिलते हैं? उत्तर भारत में उपलब्ध व्यंजनों की भी दुर्गति हो रही है।

अचरज नहीं कि पहले उत्तर भारत में जो चीज़ें गली-मुहल्लों की दुकानों में आम हुआ करती थीं, उन्हें अब खास दुकानों में तलाशा जाता है। यह भी एक कड़वा सच है कि कई स्थानीय व्यंजनों को हमने तथाकथित आधुनिकता के चलते छोड़ दिया है और पश्चिम की नकल में बहुत सी ऐसी चीज़ें अपना ली हैं, जो स्वाद, स्वास्थ्य और सरसता के मामले में हमारे बहुत अनुकूल नहीं हैं।

हो यह भी रहा है कि खानपान की मिश्रित संस्कृति में हम कई बार चीज़ों का असली और अलग स्वाद नहीं ले पा रहे। अकसर प्रीतिभोजों और पार्टियों में एक साथ ढेरों चीज़ें रख दी जाती हैं और उनका स्वाद गड्डमड्ड होता रहता है। खानपान की मिश्रित या विविध संस्कृति हमें कुछ चीज़ें चुनने का अवसर देती है, हम उसका लाभ प्राय: नहीं उठा रहे हैं। हम अकसर एक ही प्लेट में कई तरह के और कई बार तो बिलकुल विपरीत प्रकृतिवाले व्यंजन परोस लेना चाहते हैं।

इसलिए खानपान की जो मिश्रित-विविध संस्कृति बनी है—और लग यही रहा है कि यही और अधिक विकसित होनेवाली है—उसे तरह-तरह से जाँचते रहना ज़रूरी है।

❑ *प्रयाग शुक्ल*

निबंध से

1. खानपान की मिश्रित संस्कृति से लेखक का क्या मतलब है? अपने घर के उदाहरण देकर इसकी व्याख्या करें?
2. खानपान में बदलाव के कौन से फ़ायदे हैं? फिर लेखक इस बदलाव को लेकर चिंतित क्यों है?
3. खानपान के मामले में स्थानीयता का क्या अर्थ है?

निबंध से आगे

1. घर में बातचीत करके पता कीजिए कि आपके घर में क्या चीज़ें पकती हैं और क्या चीज़ें बनी-बनाई बाज़ार से आती हैं? इनमें से बाज़ार से आनेवाली कौन सी चीज़ें आपके माँ-पिता जी के बचपन में घर में बनती थीं?
2. यहाँ खाने, पकाने और स्वाद से संबंधित कुछ शब्द दिए गए हैं। इन्हें ध्यान से देखिए और इनका वर्गीकरण कीजिए–

   उबालना, तलना, भूनना, सेंकना, दाल, भात, रोटी, पापड़, आलू, बैंगन, खट्टा, मीठा, तीखा, नमकीन, कसैला

भोजन	कैसे पकाया	स्वाद

3. छौंक   चावल   कढ़ी

   - इन शब्दों में क्या अंतर है? समझाइए। इन्हें बनाने के तरीके विभिन्न प्रांतों में अलग-अलग हैं। पता करें कि आपके प्रांत में इन्हें कैसे बनाया जाता है।

4. पिछली शताब्दी में खानपान की बदलती हुई तसवीर का खाका खींचें तो इस प्रकार होगा–

   सन् साठ का दशक – छोले-भटूरे
   सन् सत्तर का दशक – इडली, डोसा
   सन् अस्सी का दशक – तिब्बती (चीनी) भोजन
   सन् नब्बे का दशक – पीज़ा, पाव-भाजी

   - इसी प्रकार आप कुछ कपड़ों या पोशाकों की बदलती तसवीर का खाका खींचिए।

5. मान लीजिए कि आपके घर कोई मेहमान आ रहे हैं जो आपके प्रांत का पारंपरिक भोजन करना चाहते हैं। उन्हें खिलाने के लिए घर के लोगों की मदद से एक व्यंजन-सूची (मेन्यू) बनाइए।

अनुमान और कल्पना

1. 'फ़ास्ट फ़ूड' यानी तुरंत भोजन के नफ़े-नुकसान पर कक्षा में वाद-विवाद करें।
2. हर शहर, कस्बे में कुछ ऐसी जगहें होती हैं जो अपने किसी खास व्यंजन के लिए जानी जाती हैं। आप अपने शहर, कस्बे का नक्शा बनाकर उसमें ऐसी सभी जगहों को दर्शाइए।
3. खानपान के मामले में शुद्धता का मसला काफ़ी पुराना है। आपने अपने अनुभव में इस तरह की मिलावट को देखा है? किसी फ़िल्म या अखबारी खबर के हवाले से खानपान में होनेवाली मिलावट के नुकसानों की चर्चा कीजिए।

भाषा की बात

1. **खानपान** शब्द, **खान** और **पान** दो शब्दों को जोड़कर बना है। खानपान शब्द में **और** छिपा हुआ है। जिन शब्दों के योग में **और**, **अथवा**, **या** जैसे योजक शब्द छिपे हों, उन्हें द्वंद्व समास कहते हैं। नीचे द्वंद्व समास के कुछ उदाहरण दिए गए हैं। इनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए और अर्थ समझिए–

सीना-पिरोना	भला-बुरा	चलना-फिरना
लंबा-चौड़ा	कहा-सुनी	घास-फूस

2. कई बार एक शब्द सुनने या पढ़ने पर कोई और शब्द याद आ जाता है। आइए शब्दों की ऐसी कड़ी बनाएँ। नीचे शुरुआत की गई है। उसे आप आगे बढ़ाइए। कक्षा में मौखिक सामूहिक गतिविधि के रूप में भी इसे दिया जा सकता है–
इडली – दक्षिण – केरल – ओणम् – त्योहार – छुट्टी – आराम...

कुछ करने को

- उन विज्ञापनों को इकट्ठा कीजिए जो हाल ही के ठंडे पेय पदार्थों से जुड़े हैं। उनमें स्वास्थ्य और सफ़ाई पर दिए गए ब्योरों को छाँटकर देखें कि हकीकत क्या है?